धूतपापेश्वर

।। आरोग्यचिंतन ।।

पत्रिका

।। शास्त्रतत्त्वप्रकाशार्थं एषा चिन्तनपत्रिका ।।

दिसंबर २०१९

AROGYACHINTAN PATRIKA

संपादकीय

आयुर्वेद चिकित्सक सदियों से आयुर्वेदीय उपचार से रोगीयों की यशस्वी चिकित्सा करते आ रहे है। आज के आधुनिक जगत् में आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति का स्वीकार होने लगा है। इन दिनों का आधुनिक विज्ञान भी नई-नई उपलब्धियों के कारण प्राचीन आयुर्वेद के तत्त्वों को आण्विक स्तर पर समझने लगा है। आधुनिक अनुसंधान तथा अध्ययन के परिणामस्वरूप आयुर्वेदीय औषधी के चिकित्सा प्रभाव का आण्विक स्तर पर वैज्ञानिक आधार प्राप्त हो रहा है।

सत्त्व, आत्मा और शरीर का संयोग (त्रिदंड) आयुर्वेद में चिकित्साधिकृत पुरुष माना गया है। स्वास्थ्यरक्षण और रोगप्रशमन में सत्त्व-आत्मा-शरीर के त्रिदंड को 'Systems Biology' का उत्तम उदाहरण माना जा सकता है। आयुर्वेद प्रयोजन- **स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणम्, आतुरस्य विकारप्रशमनम्।** के प्राप्ती के लिए Systems Biology की संकल्पना का विचार अत्यंत सुसंगत है ।

आयुर्वेद के अनुसार शरीर दोष-धातु- मल से बना है। दोषों को शरीर के कार्यकारी घटक, धातुओं को रचना के आधार और मलों को त्याज्य घटक समझा जा सकता है। दोषवैषम्य से रोग उत्पन्न होते है। प्रकुपित दोष धातु और मल को दुष्ट करते है। सत्त्व, आत्मा और शरीर (दोष-धातु-मल) का संयोग तथा उनके बीच परस्पर संबंध का अणु, कोशिका, अंग, जीव, आदि के आधार पर अध्ययन किया जा रहा है, जो कि Systems Biology का आधार बना है। शरीर (दोष, धातु, मल), सत्त्व और आत्मा इनके परस्पर घटनेवाले विविध कर्म अत्यंत जटिल हैं। ये सारे घटक परस्पर संपृक्त हैं। इन सारे घटकों के कार्यकलाप का अध्ययन Systems Biology कहलाता है।

चिकित्सा करते समय वैद्य को चाहिए की सर्वप्रथम रोग की परीक्षा करे, पश्चात् औषध की, और बाद में ज्ञानपूर्वक चिकित्सा करें ।

रोगमादौ परीक्षेत ततोऽनन्तरमौषधम्।

ततः कर्म भिषक् पश्चात् ज्ञानपूर्वं समाचरेत्।। – चरक

रोग परीक्षा के लिए भी मार्गदर्शन किया गया है।

दूष्यं देशं बलं कालमनलं प्रकृतिं वयः।

सत्त्वं सात्म्यं तथाहारं अवस्थाश्च पृथग्विधाः।।

औषध परीक्षा के लिए भी मार्गदर्शन किया गया है।

सूक्ष्मा हि द्रव्यरसगुणवीर्यविपाकदोषधातुमलाशयमर्मसिरास्नायुसन्ध्यस्थि गर्भसंभवद्रव्यसमूहविभागास्तथा प्रनष्टशल्योद्धरणव्रणविनिश्चयभग्नविकल्पाः साध्ययाप्यप्रत्याख्येयता च विकाराणामेवमादयश्चान्ये विशेषाः सहस्रशो ये विचिन्त्यमाना विमलविपुलबुद्धेरपि बुद्धिमाकुलीकुर्युः किं पुनरल्पबुद्धेः।

–सुश्रुत

द्रव्य संबंधी इन तथ्यों का ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि –

किंचिद्रसेन कुरुते कर्म वीर्येण चापरम्।

द्रव्यं गुणेन पाकेन प्रभावेण च किंचन।। च.सू.

रोग और औषध का इस प्रकार सूक्ष्म विचार करने से रोग चिकित्सा में वैद्य कभी भी अयशस्वी नहीं होगा, चिकित्सा में त्रुटी नही होगी।

सूक्ष्मसूक्ष्म समीक्ष्येषां दोषौषधविचारणे।

यो वर्तते चिकित्सायां न स स्खलति जातुचित्।। वागभट

जैसे की आकृति में दिखाया गया है, आयुर्वेदोक्त स्वास्थ्यरक्षण और विकारप्रशमन की प्रक्रिया अत्यंत सर्वसमावेशक और आधुनिक है।

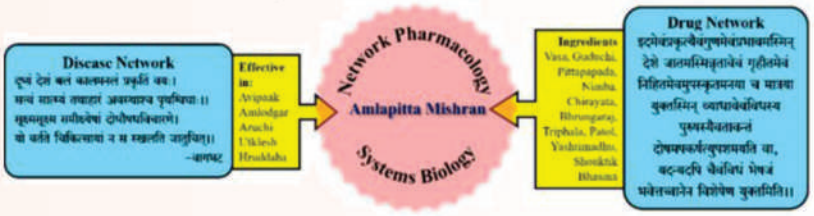

औषध के रस-वीर्य-विपाक और प्रभाव, इनका शरीर मे होनेवाले विकारों के घटकों पर होनेवाले परिणामों को Network Pharmacology कहा जा सकता है। इस अध्ययन में शरीर के दोष – धातु – मल और उनके उपप्रकारों में कैसे परिणाम होता है इसका सूक्ष्मातिसूक्ष्म विचार किया है।

आधुनिक विकसित Network Pharmacology का उपयोग आयुर्वेद के औषधों पर अध्ययन में और आयुर्वेद औषधो का कार्मुकत्व समझने में किया जा रहा है।

आधुनिक वैद्यकशास्त्र आजतक एक Drug और एक Target इस प्रकार से विचार करता था परंतु अब यह विदित होने लगा है की अनेक विविध घटको से बने हुए शरीर का स्वास्थ्य बनाए रखने के लिए, तथा रोग निवारण के लिए अनेक विभिन्न घटकयुक्त औषधों का उपयोग किया जाना चाहिए।

प्राचीन आयुर्वेद ग्रंथों में वर्णित संकल्पनाए आज Systems Biology सिस्टम बायोलॉजी और Network Pharmacology नाम से जाने जानी लगी है। यह अत्यंत सुखद है। इससे आधुनिक वैद्य की अपने शास्त्र पर अधिक दृढ श्रध्दा बनेगी।

वाग्भटाचार्य के एक सूत्र के साथ यह कथन समाप्त करते है।.....

इदमागमसिद्धत्वात्प्रत्यक्षफलदर्शनात्।

मन्त्रवत्संप्रयोक्तव्यं न मीमांस्यं कथञ्चन।।

वैद्य.मिलिंद पाटील

वैद्यकीय सलाहकार

विक्रम डिविजन,श्री धूतपापेश्वर लिमिटेड

"Indeed, the human body is much more than the sum of its parts, and life relies upon this total function, not just on the function of individual body parts in isolation from the others." Guyton and Hall, Textbook of Medical Physiology, 12th Edition, 2011

वृद्धावस्था में उत्पन्न पाण्डुरोग के चिकित्सा में यकृत् का महत्त्व।

हमारे देश में पाण्डुरोग यह बच्चों , स्त्रियों और वृद्धो में बहुत प्रचलित है। विशेष रूपसे वयस्कों में लोह की कमी से उत्पन्न होनेवाला पाण्डुरोग अत्यधिक प्रचलित है। वृद्धावस्था में लोह की कमी से उत्पन्न पाण्डुरोग, मृत्युदर का महत्वपूर्ण स्वतंत्र कारण है। इस अवस्था मे केवल लोह पूरण से संतोष जनक उपचार नही हो पाते इसलिए, वृद्धावस्था में उत्पन्न पाण्डुरोग की चिकित्सा हेतु संप्राप्ति समझना महत्त्वपूर्ण है।

अब यह अच्छी तरह से स्थापित है कि वृद्धावस्था यह एक जैविक प्रक्रिया है, जिसका कारण वृद्धावस्था में उत्पन्न जीर्ण लक्षणात्मक शोथ है। संभवतः वृद्धावस्था में अत्यधिक फ्रि रॅडिकल के कारण ऑक्सिडेटिव स्ट्रेस उत्पन्न होता है, जो जीर्ण शोथ उत्पन्न कर वृद्धावस्था में लोह कमी जन्य पाण्डुरोग को उत्पन्न करता है।

इन कारणों को ध्यान में रखते हुए वृद्धावस्था में उत्पन्न पाण्डुरोग के चिकित्सा हेतु एक नए दृष्टि का विचार होना जरुरी है। बढते वृद्ध जनसंख्या के साथ, वृद्धावस्था में उत्पन्न होनेवाले पाण्डुरोग एक उभरती हुई वैश्विक स्वास्थ्य समस्या बन गई है। अब तक वृद्धावस्था में रक्तक्षय एक अल्प गंभीर समस्या के रूप में जाना जाता था, परंतु सद्यःकालिन अनुसंधान के कारण यह धारणा अब बदल रही है। क्योंकि वृद्धावस्था में सामान्य स्तर पर मृत्युदर को बढानेवाले व्याधी जैसे हृद्रोग, कर्करोग आदि के अलावा लोह कमी जन्य पाण्डुरोग मृत्युदर एक महत्वपूर्ण कारण है। पाण्डुरोग के कारण वृद्धावस्था में शारीरिक अक्षमता, दैनंदिन जीवन में दौर्बल्य, मेधाशक्ति में कमी, मनो अवसाद तथा अन्य लक्षण उत्पन्न होते है।

आयुर्वेद के अनुसार यकृत् यह शोणितवह अथवा रक्तवह स्रोतस् का मूल स्थान हैः

शोणितवहानां स्रोतसां यकृन्मूलं प्लीहा च।– च. वि. ५/८

संभवतः पाण्डुरोग और यकृत् के बीच संबंध है, क्योंकि आयुर्वेद यकृ त् को रक्तनिर्माण प्रक्रिया का मूल अवयव मानता है। यकृत् और पाण्डुरोग के बिच की प्रमुख कडी हेपसिडीन हो सकती है। हेपसिडीन यह एक पेप्टाइड हार्मोन है, जो यकृत् में उत्पन्न होकर लोह की समस्थिति बनाए रखता है। हेपसिडीन एक मात्र ज्ञात लोह निर्यातक (आर्यन एक्सपोर्टर) फेरोपोर्टिन–१ की सक्रियता को नियंत्रित करता है। जिसके विनियमन से लसिका में स्थित लोह का ह्रास होता है और संरक्षित लोह में वृद्धि होती है। **लोह कमतरता जन्य पाण्डुरोग से पीडित रुग्णों के लसिका में हेपसिडीन के उच्च स्तर पाए जाते हैं।**

रक्तनिर्माण प्रक्रिया (एरिथ्रोपोएसिस– EPO) के शारीर क्रियात्मक ज्ञान के आधार पर यह कह सकते है कि विशेषतः शोथ निर्माण कारक घटक जैसे सायटोकिन्स पाण्डुरोग उत्पन्न करते है, जैसे कि (आकृति १.)

१. शोथ रक्तनिर्माण प्रक्रिया को कम कर देता है क्योंकि शोथ के कारण रक्त का निर्माण करनेवाले कोषाणु काम करना बंद कर देते है।

२. शोथ के कारण EPO की निर्मिती कम हो जाती है।

३. शोथ के कारण हेपसिडीन निर्मिती बढती है और परिणाम स्वरूप आंत्र से लोह का शोषण कम होता है।

४. शोथ के कारण रक्तकोषाणु बलहीन होते है, जिसकी पूर्ति अधिक रक्तनिर्माण से नहीं हो पाती।

प्रसिद्ध पाण्डुरोगहर कल्प जैसे नवायस लोह के घटकद्रव्य त्रिफला, त्रिकटु और त्रिमद शोथहर कार्य करते हुए संभवतः हेपसिडीन की मात्रा कम करते होंगे।

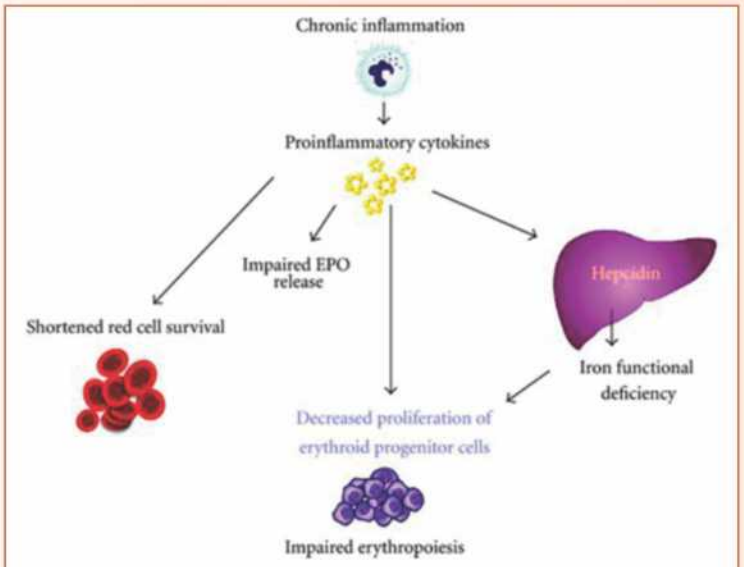

आकृति १: वृद्धावस्था में उत्पन्न शोथजनित पाण्डुरोग की संप्राप्ति।

हेपसिडीन की मात्रा कम होने की वजह से आंत्र में लोह के शोषण में वृद्धि होकर रक्तनिर्माण प्रक्रिया शीघ्र बढती है। पाण्डुहर कल्प के वनस्पती द्रव्य संभवतः हेपसिडीन की मात्रा कम करके रक्तवर्धन का कार्य करते है।

'IOP Conf. Series: Materials Science and Engineering 333 (2018)' में प्रकाशित अध्ययन अनुसार Miraxanthin-V, Liriodenin और Chitranone जैसे वनस्पती औषधी हेपसिडीन का क्षय करते है।

Chitranone यह चित्रक (Plumbago zeylanica) का एक कार्यकारी घटक है। चित्रक को '**चित्रकोऽग्निसमः**।' के रूप में वर्णन किया है, जिसका रसधात्वग्निवर्धन एक मुख्य कार्य है। इसलिए, पाण्डुरोग जो कि एक रसवह स्रोतस् व्याधी है और उसके चिकित्सा हेतु चित्रक उपयुक्त है।

अभ्रलोह टेबलेट्स नवायास लोह के घटक द्रव्य और शतावरीयुक्त एक उत्तम रक्तवर्धक कल्प है।

शतावरी...रसायनी...मेधाऽग्निपुष्टिदा...बल्या..अस्रशोथजित्।

शतावरी यह रसायन, मेध्य, बल्य, रक्तदोष और शोथनाशक औषधी है।

अल्परक्तोऽल्पमेदस्को निःसारःशिथिलेन्द्रियः।
पांडुरोगी तु सेवेत अग्र्यलोहं त्रिकत्रयैः।।

अभ्रलोह टेबलेट्स

उपयुक्तता: पाण्डुरोग, श्रम और क्लम, पाण्डुरोग से उत्पन्न विषाद, गर्भावस्था में उत्पन्न पाण्डुरोग, वृद्धावस्था में उत्पन्न, पाण्डुरोग, अग्निमांद्य, सामान्य दौर्बल्य एवं व्याधी के पश्चात् उत्पन्न दौर्बल्य, पाण्डुरोग के कारण अध्ययन क्षमता में बाधा

मात्रा एवं अनुपान :
१ से २ गोलियाँ दिन में २ बार भोजन पश्चात् दूध या कोष्ण जल के साथ या रूग्णावस्थानुसार

Shree Dhootapapeshwar Standards
SDS Monograph No. 0700014
Abhraloha Tablets

उपलब्धता : ३० गोलियाँ

AGEs विरोधी रसायनः मधुमेह कुसुमाकर रस।

बिघडी हुई आधुनिक जीवन शैली के कारण संसारभर में तथा भारतवर्ष में प्रमेहियों की संख्या बहुत बढ रही है (Diabetes Research and Clinical Practice, Volume 138, April 2018)। वर्ष २०१७ में आयु के १८ से ९९ वर्षतक के ४५.१ करोड लोग मधुमेह से पीडित होने की संभावना जताई गई और करीब ०.५ करोड लोगोंके मृत्यु का कारण मधुमेह बना। एक अन्य अध्ययन के अनुसार विश्वभरमें रक्तशर्करा कम करने के लक्ष्यों को प्राप्त करने में विफलता आयी है। इसका मुख्य कारण ऍडवान्सड ग्लायकेशन एंड प्रोडक्ट (AGEs) का संचय है। अयोग्य जीवनशैली और मधुमेह चिकित्सा की विफलता से AGEs का निर्माण होता है।

AGEs एक अयोग्य, परिश्रमविहीन जीवनशैली (आस्यासुखं स्वप्नसुखं) और कुपोषण (दधीनि ग्राम्यौदकानूपरसाः पयांसि) के परिणाम स्वरूप मधुमेह और उसके उपद्रवों को उत्पन्न करता है। इसी तथ्य का वर्णन आचार्य चरक ने युगों पहले किया हैः

आस्यासुखं स्वप्नसुखं दधीनि ग्राम्यौदकानूपरसाः पयांसि।
नवान्नपानं गुडवैकृतं च प्रमेहहेतुः कफकृच्च सर्वम्।। – च.चि. ६/४

जीवनशैली घटक जैसे धूम्रपान, व्यायाम का अभाव, अध्यशन, दिवास्वाप, रात्रिजागरण, आदि AGEs को प्रभावित कर मधुमेह और अन्य उपद्रवों को उत्पन्न करते है। AGEs एक प्रकार का घटक समूह है, जो रक्तशर्करा व वृद्धि अथवा ऑक्सीडेटिव स्ट्रेस के उच्च स्तर के कारण उत्पन्न होते है। वे विष समान होते है और त्रिमर्म जैसे हृदय–बस्ति–शिर को क्षति पहुँचाते है।

आचार्य चरक अनुसार प्रमेह में कफ दुष्टि की प्रधानता होती है, जिसके परिणाम स्वरूप अन्य दूष्यों के साथ क्लेद, कफ और मेदधातु की वृद्धि होती है।

बहुद्रवः श्लेष्मा दोषविशेषः बद्धबद्धं मेदो दूष्य–विशेषाः।। –च.चि.४/६,७

इसके अलावा आचार्य चरक ने श्लोक में दूष्यों के वर्णन हेतु बहु और अबद्ध जैसे विशेषण जोडे है। इन दूष्यों की AGEs और उनके कार्यों के साथ तुलना की जा सकती है।

'Advanced glycation end products and risks for chronic diseases: intervening through lifestyle modification' में वर्णित अध्ययनों अनुसार मधुमेह और वृक्करोग के रुग्णों में AGEs वृद्धि पाई गयी। AGEs विभिन्न प्रकार के उपद्रव के साथ संबंधित है, जैसे वृद्धावस्थाजन्य स्मृतिभ्रंश, नेत्ररोग, स्त्रीवंध्यत्व, व्रण, हृद्रोग, अस्थिरोग, मुखरोग, इंद्रयशैथिल्य, पाण्डुरोग, मज्जावह संस्थान विकार, निद्रानाश, अग्न्याशय कोषाणु बिटा–सेल कर्महानि, दूष्यों में विकृती और मनोविकृती।

मधुमेह के उपद्रवों की यह सूची स्पष्ट रूपसे प्रमेह के दूष्य संग्रह का प्रतिनिधित्व करती है। लगभग शरीर के सभी धातु और अवयव मधुमेह के संप्राप्ति में अंतर्भूत है।

अब तक ३६ से अधिक AGEs ज्ञात है और इनमें से आधे कई खाद्य पदार्थों में पाए गए है। पाश्चात्य आहार में AGEs की प्रचुरता पाई जाती है। दूध, सब्जियाँ और पिष्टमय पदार्थों में AGEs की मात्रा सबसे कम होती है। औदक –आनुप– मांसाहार, दुग्ध विकार (पनीर) आदि में AGEs की अधिकतम मात्रा पाई गयी है।

यह विश्लेषण आचार्य चरक द्वारा वर्णित प्रमेह के हेतुओं का आधुनिक विस्तार है।

'दधीनि ग्राम्यौदकानूपरसाः पयांसि'

इसीप्रकार योगरत्नाकर ने भी इनही खाद्य पदार्थों को प्रमेह के लिए अपथ्य बताया है।

सौविरकं सुरासूक्तं तैलं क्षारं घृतं गुडम्।
अम्लैक्षुरसपिष्टान्नानूपमांसानि वर्जयेत्।। – योगरत्नाकर

इसलिए, प्रमेह के निवारण हेतु AGEs के निर्माण अथवा कार्यों को नियंत्रित करने का अंतिम लक्ष्य निश्चित रूपसे **'निदानपरिवर्जनम्।'** द्वारा साध्य किया जा सकता है। आचार्य चरक के अनुसार इसके द्वारा इससे हमें न केवल प्रमेह को नियंत्रित करने में मदद मिलेगी बल्कि प्रमेह उपद्रवों का भी निवारण किया जा सकता है।

हरिद्रा (Curcuma longa) और आमलकी (Emblica officinalis) जैसे औषधी AGEs विरोधी (प्रमेहघ्न) कार्य दर्शाती है। संभवतः उनका कार्य AGEs को विनियमित कर अथवा उनके संश्लेषण में अवरोध निर्माण कर उत्पन्न AGEs का क्षरण करना है।

आचार्य वाग्भट ने इसलिए, हरिद्रा और आमलकी का वर्णन **'मेहेषु धात्रीनिशे'** इसप्रकार बताया है । (Effect of curcumin on the advanced glycation and cross-linking of collagen in diabetic rats. Biochem Pharmacol. 1998)

Handbook of Nutrition, Diet, and the Eye (Second Edition), 2019 में प्रकाशित 'Diabetic cataract and role of anti-glycating phytochemicals' अध्याय के अनुसार आमलकी, बिल्व, मामेज्जक, हरिद्रा, आदि मधुमेहजन्य दृष्टिपटल के क्षति के नियंत्रण में उपयुक्त है; गुडूची (Tinospora cordifolia) में स्थित बेर्बेरिन और स्टार्च से रक्तशर्करा और मस्तिष्कगत लिपिड कम होते है।

उत्तम मधुमेह निवारण के साथ–साथ, उपचार का पूर्व प्रारंभ तथा मधुमेह कुसुमाकर रस जैसे औषधीयों का उपयोग, प्रमेही रुग्णों में उपद्रवों का शमन, उनके जीवन की गुणवत्ता में सुधार कर सकते है।

मेहानामनुषङ्गिषु कान्तिश्रीबलवर्धनम्।
मेहहरो रसः श्रेष्ठः प्रमेहिहितकारकः।।

मधुमेह कुसुमाकर रस

उपयुक्तता:

मधुमेह और संबंधित उपद्रव

मधुमेहजन्य नेत्रविकार, दौर्बल्य, इंद्रियशैथिल्य, दुष्ट व्रण

मात्रा एवं अनुपान :
१ से २ गोलियाँ दिन में
एक या दो बार गोघृत,
कोष्ण जल के साथ अथवा
रोगावस्थानुसार

Shree Dhootapapeshwar Standards
SDS Monograph No. 1902614
Madhumeha Kusumakar Rasa

उपलब्धता :
३० गोली (ब्लिस्टर पॅक)

रक्तस्तंभक टेबलेट्सः रक्तस्तंभक एवं रक्तवर्धक

रक्तस्तंभक®
टेबलेट्स

रक्तस्राव रोकने में लाभदायी

आचार्य सुश्रुत कहते है **'रक्तं जीव इति स्थितिः।'** वस्तुतः रक्त को प्राण का आश्रय माना गया है। रोज के दैनंदिन चिकित्सा में काफी रक्तपित्त के विकार दिखाई देते है। सामान्यतः इन विकारों के चिकित्सा हेतु नागकेशर, मोचरस, लाक्षा, दूर्वा आदि औषधों का प्रयोग किया जाता है। यह औषधीयाँ प्रायः तिक्त–कषाय–रसात्मक और शीत वीर्य की होती है। इनका प्रधान कार्य रक्तस्तंभन है। इस संदर्भ में आचार्य चरकने चिकित्सा स्थान के **रक्तपित्त चिकित्सा अध्याय में गैरिक के उपयोग का वर्णन किया है।** प्रत्यक्ष रूपसे रक्तपित्त चिकित्सा में गैरिक का उपयोग रक्तवर्धन कर्म के लिए होगा ऐसा प्रतित होता है, परंतु गैरिक पर उपलब्ध आधुनिक विज्ञान सर्वथा नविन कार्मुकत्व की ओर निर्देश करते है। गैरिक का रक्तस्तंभन में भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व है ऐसे प्रतित होता है।

Sci Rep. 2018 Jan 10;8(1):233.

Thrombin@Fe3O4 nanoparticles for use as a hemostatic agent in internal bleeding.

Shabanova EM, Drozdov AS, Fakhardo AF, Dudanov IP, Kovalchuk MS, Vinogradov VV.

Abstract

Bleeding remains one of the main causes of premature mortality at present, with internal bleeding being the most dangerous case.

In this paper, **magnetic hemostatic nanoparticles are shown for the first time to assist in minimally invasive treatment of internal bleeding, implying the introduction directly into the circulatory system followed by localization in the bleeding zone due to the application of an external magnetic field.** Nanoparticles were produced by entrapping human thrombin (THR) into a sol-gel derived magnetite matrix followed by grinding to sizes below 200 nm and subsequent colloidization. Prepared colloids show protrombotic activity and cause plasma coagulation in in vitro experiments. We also show here using a model blood vessel that the THR@ferria composite does not cause systematic thrombosis due to low activity but being concentrated by an external magnetic field with simultaneous fibrinogen injection accelerates local hemostasis and stops the bleeding. For instance, a model vessel system with circulating blood at the puncture of the vessel wall and the application of a permanent magnetic field yielded a hemostasis time by a factor of 6.5 shorter than that observed for the control sample. Biocompatibility of composites was tested on HELF and HeLa cells and revealed no toxic effects.

Biomaterials. 2010 Feb;31(4):741-7.

Enhancement of incisional wound healing by thrombin conjugated iron oxide nanoparticle.

Ziv-Polat O, Topaz M, Brosh T, Margel S. MS, Vinogradov VV.

Abstract

Thrombin has been clinically used for topical hemostasis and wound management for more than six decades. The half-life of thrombin in human plasma is shorter than 15s due to close control by inhibitors. In order to stabilize the thrombin, it was bound to maghemite (gamma-Fe2O3) nanoparticles, as demonstrated in previous work. The aim of the present study was to examine the efficiency of the bound thrombin for wound healing applications compared to the free thrombin. For this purpose, incisional wounds on rat skin were treated with a mixture of fibrinogen, CaCl2 solution and free or bound thrombin. The wounds' edges were then approximated by skin staples.

The control incisional wounds were closed with staples only. **In the course of 28 days of healing the highest values of skin tensile strength were observed following treatment with the bound thrombin.** Significantly lower values of tensile strength were observed following treatment with the free thrombin, and the lowest values were obtained following treatment with staples only. **The histological findings correlate with the mechanical strength measurements, which demonstrate the most advanced stages of healing following treatment with the bound thrombin.**

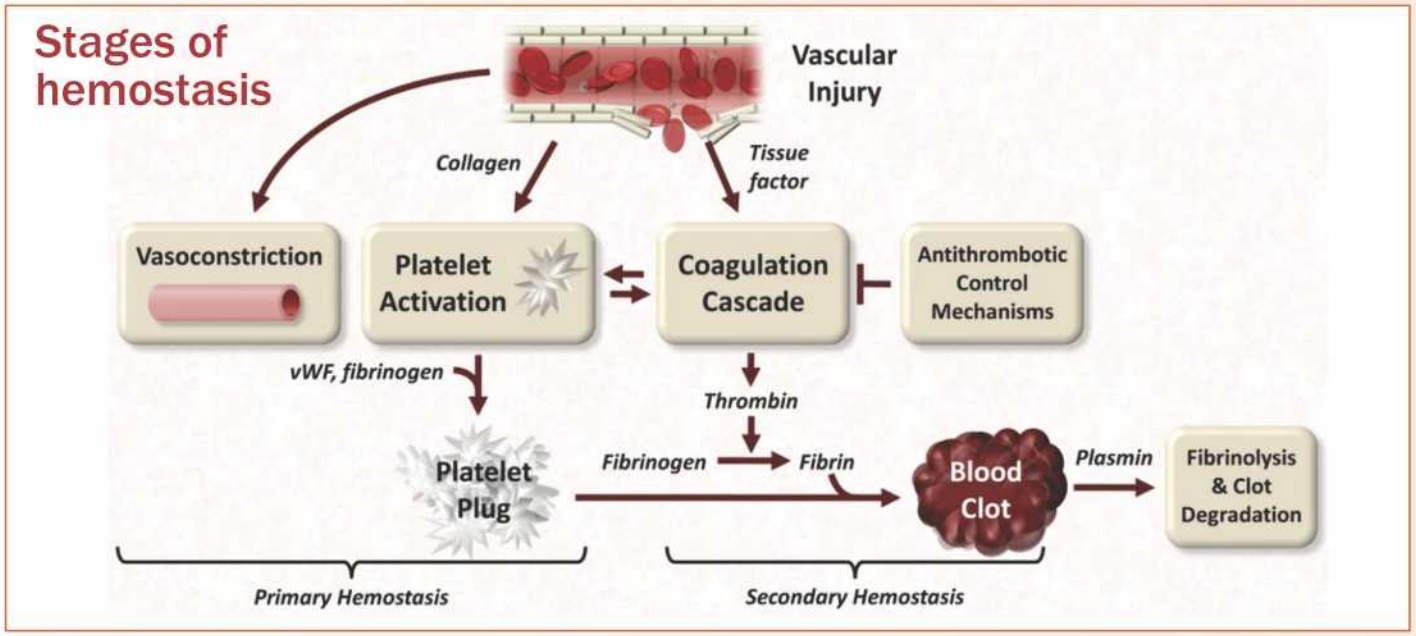

घटक द्रव्य	चित्र	मात्रा	कार्य
नागकेशर Mesua ferrea		१०० मि.ग्रा.	**अर्शांस्यपयान्ति रक्तानि।** **(अर्श के रक्तस्राव में उपयुक्त।)**
शोधित लाक्षा Laccifer Lacca		१०० मि.ग्रा.	**व्रणोरःक्षतगदापहा। (व्रणरोपक।)**
मोचरस Bombax malabaricum		१०० मि.ग्रा.	**प्रदरं नाशयत्येव दुःसाध्यं च न संशय।** **(प्रदर के रक्तस्राव में उपयुक्त।)**
शोधित गैरिक Iron oxide		५० मि.ग्रा	**रक्तपित्तप्रशमनं असृग्दरनाशनम्..व्रणरोपणम्।** **(रक्तपित्त, प्रदर नाशक और व्रणरोपक।)**
भावना द्रव्य: **दूर्वा स्वरस** Cynodon dactylon		**यथावश्यक**	**दूर्वा तु रक्तपित्तघ्नी। (रक्तपित्तघ्न।)**

उपयुक्तता

रोगघ्नता	अवधि
नासागत रक्तस्राव	१ सप्ताह
सरक्त मूत्रप्रवृत्ती	१ सप्ताह
रक्तप्रदर	३ सप्ताह के लिए • **पहला सप्ताह** – मासिक धर्म के अपेक्षित दिन से पहले • **दूसरा सप्ताह** – मासिक धर्म के समय • **तिसरा सप्ताह** – मासिक धर्म के पश्चात
गुदगत रक्तस्राव अर्श, परिकर्तिका, गुदगत नाडिव्रणसंबंधित	**लक्षण कम होने तक** **पुनरुद्भव को रोकने के लिए २ सप्ताह तक जारी रखने की सलाह दी जाती है**

मात्रा एवं अनुपान

२ से ३ गोलियाँ दो या तीन बार उशिरासाव, चंदनासव, शीतसुधा, गोदुग्ध, मक्खन या शहद के साथ

उपलब्धता : ६० गोली

Shree Dhootapapeshwar Standards
SDS Monograph No. 0702604
Raktastambhak Tablets

अर्श की सुखोपाया चिकित्साः अर्श हिता

अर्श सामान्यतः बडी संख्या में प्रचलित और बहुत कष्टप्रद व्याधि है। अर्श रोगी के सामाजिक, व्यावसायिक, आर्थिक जीवनपर नकारात्मक प्रभाव पडता है, जिससे उनके जीवन की गुणवत्ता का ह्रास होता है।

जैसे की कहा हैः

अरिवत् प्राणिनो मांसकीलका विशसन्ति यत्।

मेद, मांस गुदमार्ग के अंतःस्त्वचा के नीचे रहते है, जिस में सिराएँ होती है।

सर्वेषां चार्शसामधिष्ठानं–मेदो मांसं त्वक् च। – च.चि.१४/६

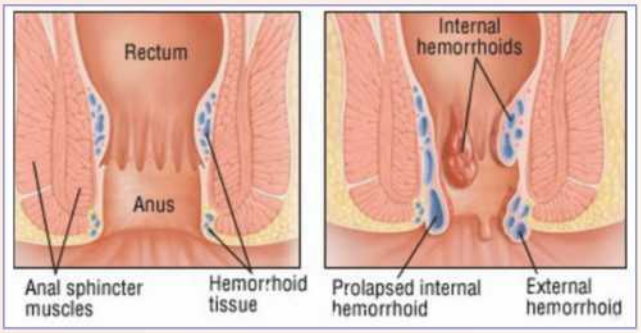

वे गुदमार्ग को पुरी तरह से बंद करने में योगदान करते हैं। हालांकि, कुछ रुग्णों में वे कई गुदविकारों का कारण भी बनते है। उनमें वृद्धि, शोथ, रक्तस्कंदन अथवा उनके भ्रंश से अनेक रोगसूचक लक्षण समूह उत्पन्न होते है। इनमें से सबसे सामान्य लक्षण पीडा रहित गुदगत रक्तस्राव है।

यद्यपि अर्श सर्वसामान्य गुदगत विकार है, तथापि इसकी वास्तविक प्रचुरता अज्ञात है क्योंकि लज्जावश रुग्ण चिकित्सक के पास चिकित्सा करने नहीं जाते ।

मनुष्य के उत्क्रान्ति में जब मनुष्य दोनों पैंरो पर खडा होने लगा, तब से गुरुत्वाकर्षण के कारण गुदगत अर्श की उत्पत्ती हुई।

इन लक्षणोंकी प्रचुरता गर्भावस्था और प्रसवोत्तर काल में बढती है। गुदकण्डु, गुदभ्रंश, रक्तस्राव और दर्द यह अर्श के प्रमुख लक्षण है।

अर्श रोग की चिकित्सा में अर्श केलक्षणों का नियंत्रण तथा अन्य उपद्रव जैसे आध्मान के उपचार शामिल है।

आचार्य चरक ने अर्श चिकित्सा हेतु चार प्रकार के उपचार बताएँ हैः
१. शस्त्रकर्म २. क्षारकर्म ३. अग्निकर्म और ४.भेषज चिकित्सा.

जबकी शस्त्रकर्म, क्षारकर्म और अग्निकर्म कष्टदायक और दारुण है, भेषज चिकित्सा सुखकर, सुरक्षित और प्रभावी होती है।

तत्राहुरेके शस्त्रेण कर्तनं हितमर्शसाम्। दाहं क्षारेण चापेके, दाहमेके तथाऽग्निना।।
अस्त्येतद्दूरितन्त्रेण धीमता दृष्टकर्मणा। क्रियते त्रिविधं कर्म भ्रंशस्तत्र सुदारुणः।।
–च.चि.१४/३४

चरक संहिता द्वारा वर्णित अर्श रोग की भेषज चिकित्सा के अंतर्गत वर्णित वनस्पती औषधी सेवन करने से किसी भी दुष्प्रभाव और दारुणता के बिना अर्श की यशस्वी चिकित्सा की जा सकती है।

यत्तु कर्म सुखोपायमल्पभ्रंशमदारुणम्।
तदर्शसां प्रवक्ष्यामि समूलानां निवृत्तये।।

कुछ आधुनिक वैद्य भेषज चिकित्सा में फ्लेवोनोइड्स का आभ्यंतर और बाह्य उपयोग करते है। इस चिकित्सा से रक्तसंवहन में सुधार होता है और शोथ में कमी होने के कारण अर्श के तीव्र लक्षणों में उपशय दिखाई देता है।

फ्लेवोनोइड टेबलेट्स सपोसिटरी, क्रिम और वाइप्स सहित विभिन्न रुपों में उपलब्ध है।

भेषज चिकित्सा के प्रमुख उद्देश्यः

१. सिराभित्ती का दृढीकरण।
२. सूक्ष्मसिराओं की संवहन शक्ती में वृद्धि।
३. सिराकौटिल्य कम करना।
४. सूक्ष्म सिराओं से होनेवाला स्राव को कम करना।
५. लसिका प्रणाली से स्रवण सुगम करना।
६. शोथनाशक प्रभाव।

क्रिम, मलहम और सपोसिटरी के रूप में उपलब्ध स्थानिक उपचार सहायक होते है। वे कई सक्रीय घटक द्वारा पीडानाशक रक्तवाहिनी संकोच और बैरियर क्रिम का कार्य करते है।

अर्श हिता टेबलेट्स और आँईन्टमेंट अर्श के लिए एक दोहरी चिकित्सा है, जो दाह और दर्द से राहत देती है।

अर्श हिता टेबलेट्स स्थित शोधित सर्ज (Shorea robusta), अरिष्टक (Sapindus trifoliatus) और सूरण (Amorphophallus campanulatus) फ्लेवोनोइड्स से भरपूर है तथा वे अर्श में पीडानाशक और शोथनाशक कार्य दिखाते है।

अर्श हिता ऑईन्टमेंट में स्थित तिल तैल, शोधित सर्ज, भीमसेनी कर्पूर और मधुच्छिष्ट फ्लेवोनोइड्से भरपूर है तथा वे अर्श में पीडानाशक और शोथ नाशक कार्य दिखाते है।

अर्श हिता ऑईन्टमेंट का प्रमुख घटक तिल तैल (Sesamum indicum seed extract) यह रसायन (free radical scavenging) और सिराकाठिण्य को कम करने का कार्य दिखाता है (anti-atherogenic)। (Food and Chemical Toxicology, Volume 47, Issue 10, October 2009)

अर्श हिता ऑईन्टमेंट का दूसरा घटक मधुच्छिष्ट (Beeswax) शोथनाशक और पीडानाशक कार्य दिखाता है, जैसे की चूहों में कैरेजेनन–प्रेरित फुफ्फुस और कॉटन पॅलेट ग्रैन्युलोमा के अध्ययन में दिखाया गया। [Evaluation of anti-inflammatory and antinociceptive effects of D-002 (beeswax alcohols), J Nat Med (2011) 65:330–335].

Cinnamomum camphora (कर्पूर) यह फ्लेवोनोइड प्रचुर औषधी है, जिसका चिकित्सीय उपयोग अर्श के दाह और शोथ में किया जाता है।

अर्शहिता सुखोपाया अल्पभ्रंशा त्वदारुणा।
सलेपेन च भवति समूलार्शनिवृत्तये।।

अर्श हिता टेबलेट्स और आँईन्टमेंट

उपयुक्तता: सरक्त अर्श, शुष्क अर्श, आभ्यंतर तथा बाह्य अर्श, सशूल अर्श, गुदशोथ, परिकर्तिका

अर्श हिता टेबलेट्स

मात्रा एवं अनुपान
२ से ३ गोलियाँ दिन में २ से ३ बार, त्रिफला चूर्ण, अभयारिष्ट या कोष्ण जल के साथ

अर्श हिता ऑईन्टमेंट

उपयोग के लिए निर्देश
मलत्याग के पूर्व एवं पश्चात् प्रयोग करे ।

Shree Dhootapapeshwar Standards
SDS Monograph No. 0702564
Arsha Hita Tablets

Shree Dhootapapeshwar Standards
SDS Monograph No. 070257
Arsha Hita Ointment

उपलब्धता : ६० गोली

उपलब्धता : ३० ग्राम

शिलाप्रवंग पौरूष ग्रंथी वृद्धि में सर्वांगिण चिकित्सा।

पौरुष ग्रंथी वृद्धि (Benign Prostatic Hyperplasia-BPH) वृद्धावस्था में पाया जानेवाला आयु संबंधी एक सामान्य विकार है, जैसे की खालित्य और पालित्य। जैसे उम्र बढती है, बढती उम्र के साथ पौरुष ग्रंथी की वृद्धि स्पष्ट रूप से होती है। पोस्टमॉर्टम अध्ययन के अनुसार ८%, ५०% और ८०% व्यक्तियों में आयु के चौथे, छठे और नौवें दशकों में क्रमशः पौरूष ग्रंथी की वृद्धि पायी जाती है। (ऊतकीय अध्ययनों पर आधारित) बढते आयु के साथ वृद्ध व्यक्तियों में पौरूष ग्रंथी का आकार २ से २.५ प्रतिशत प्रतिवर्ष बढता है।

Asian J Urol. 2017 Jul, में प्रकाशित अध्ययन के अनुसार, पौरुष ग्रंथी की वृद्धि और आयु संबंधी विकार (Lifestyle disorders) जैसे मेटाबोलिक सिंड्रोम, शोथ और इंद्रिय शैथिल्य (Erectile dysfunction-ED) के बीच दृढ संबंध है। मूत्रवह स्रोतस् के मूत्रकृच्छ्र, मूत्रदाह आदि लक्षण और लैंगिक विकार व्यक्ति के जीवन पर गंभीर परिणाम दिखाते है। मूत्रवह स्रोतस् के विकार (Lower urinary tract symptoms-LUTS) और लैंगिक विकार इन का गहरा संबंध अनेकानेक अध्ययनों में प्रस्थापित किया गया है।

विशेषतः ये सारे लक्षण अपान वायु के क्षेत्र से संबंधित है। पौरुष ग्रंथी, मूत्रवह (मूत्राशय, मूत्रमार्ग) और शुक्रवह स्रोतस् अपान वायु के क्षेत्र में आते है। मूत्राशय–मूत्रमार्ग के लक्षण और लैंगिक क्रिया (sexual functions) का मनुष्य के जीवन की गुणवत्ता (Quality of life-QoL) पर प्रभाव होता है। दोनों का प्रचलन बढते उम्र के साथ बढता हुआ दिखाई देता है। LUTS और Sexual dysfunction (SD) के बिच विभिन्न संबंधों को समझना महत्त्वपूर्ण है।

अनेक आधुनिक अध्ययनों के अनुसार पौरूष ग्रंथी की वृद्धि के साथ–साथ होनेवाले मूत्रवह संस्थान और लैंगिक विकार के बीच के Molecular pathways का ज्ञान हुआ है। इन pathways में आनेवाले विकृती के कारण अपान वायु के क्षेत्र में दोषवैषम्य उत्पन्न होता है। इस दोषवैषम्य के कारण शारीरिक स्वास्थ्य में विकृती उत्पन्न होकर उच्च रक्तचाप, प्रमेह, स्थौल्य, आदि विकार होते है। यह सभी विकार अथवा लक्षण चयापचय विकार (मेटाबोलिक सिंड्रोम–MetS) से संबधित है। इस ज्ञान से पौरूष ग्रंथी के वृद्धि की चिकित्सा के लिए एक नई दृष्टि प्राप्त होती है।

MetS इस विकार में सामान्यतः उच्च रक्तचाप, मधुमेह, स्थौल्य, ट्राइग्लिसराइड्स में वृद्धि, आदि लक्षणों का समूह दिखाई देता है।

यह ज्ञान हमें मूत्रवह स्रोतस् विकारों के जटिलताओं की समझ प्रदान कर एक विशेष अंतर्दृष्टि उत्पन्न करता है, जिससे कि पौरुष ग्रंथी की वृद्धि के चिकित्सा को अधिक सुसंगत बनाना शक्य होगा।

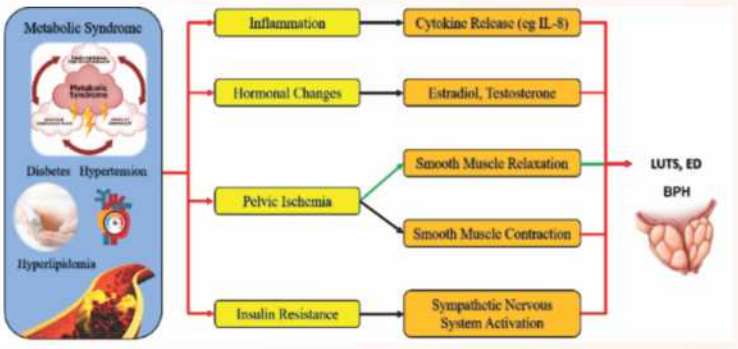

आकृती १. Proposed biochemical mechanism of the relationship between metabolic syndrome, diabetes, hyperlipidaemia and hypertension and BPH/ED.

सामान्यतः पौरुष ग्रंथी वृद्धि के उपयोग में लाने जानेवाले आधुनिक औषध जैसे टॅमसूलोसिन और फिनास्टेराइड कुछ दुष्परिणाम तथा प्रतिकुल प्रभाव (कामेच्छानाश, इंद्रिय शैथिल्य, शीघ्रपतन, आदि) दिखाते है।

पौरुष ग्रंथी के वृद्धि की आयुर्वेदिक चिकित्सा इन दुष्परिणामों से मुक्त है। इसके अंतर्गत मुख्यतः रसायन चिकित्सा की जाती है, जिनमें शिलाजित, गोक्षुर, स्वर्णमाक्षिक, आदि औषधों का उपयोग किया जाता है। आधुनिक वैज्ञानिक अध्ययनों से भी रसायन चिकित्सा का जरानाशक परिणाम सिद्ध हुआ है।

शिलाप्रवंग मौक्तिकयुक्त यह निम्नोक्त वनस्पती और रसौषधी युक्त कल्प है, जो कि पौरुष ग्रंथी की वृद्धि, मूत्राशय–मूत्रमार्ग के लक्षण और यौन क्रिया संबंधी **विकारों** में उपयुक्त (फर्स्ट चॉईस ऑफ मेडिसिन) है।

घटकद्रव्य	कार्य
शोधित शिलाजतु	मूत्रलञ्च...विशेषेण योगवाही रसायनम्... (मूत्र)कृच्छ्रप्रशमनः...प्रमेहकरिकेशरी।
प्रवाल पिष्टी	दीपनं पाचनं...वीर्य विवर्धनम्।
वंग भस्म	देहस्य सौख्यं प्रबलेन्द्रियत्वं नरस्य पुष्टिं विदधाति नूनम्।
मौक्तिक पिष्टी	वृष्यमायुष्यं शिशिरं परम्...मेहहरं मेध्यं...देह वीर्यबलबुद्धिवर्धनम्।
सुवर्णमाक्षिक भस्म	वृष्यं रसायनम् ...वस्तिरूक्... मेह...शोथ नाशयेत्।
भीमसेनी कर्पूर	कर्पूरः वृष्यः...मेदोनाशनः।
वंशलोचन	बृंहणी वृष्या बल्या (मूत्र)कृच्छ्रजित्।
एला	मूत्रकृच्छ्रघ्नी।
गुडूचि सत्व	रसायनी...बल्याऽग्निदीपनीःमेहांश्च...वलीपलितनाशिनी।
गोक्षुर	बलकृद्बस्तिशोधन...दीपनो वृष्यःपुष्टिदश्च...प्रमेह...(मूत्र)कृच्छ्रनुत्।

सद्यःकालिन अध्ययन के अनुसार पौरुष ग्रंथी की वृद्धि की चिकित्सा में गोक्षुर सफलतापूर्वक IPSS (International Prostate Sysmptom Score) को कम करता है। (Clinical Therapeutics, Volume 33, Issue 12, December 2011, Pages 1943-1952)

चूहों पर आधारित एक अन्य अध्ययन के अनुसार शिलाजित, टेस्टोस्टेरॉन प्रेरित पौरुष ग्रंथी के वृद्धि को रोकने में तथा पौरुष ग्रंथी पर सुरक्षात्मक प्रभाव दिखाता है। (International Journal of Science and Research, Volume 3 Issue 12, December 2014)

शिलाप्रवंग (मौक्तिकयुक्त) यह पौरुष ग्रंथी कि वृद्धि तथा संबंधित विकार जैसे मूत्राशय–मूत्रमार्ग के लक्षण और यौन क्रिया संबंधी विकार में विकारों में अत्यधिक प्रभावी कल्प है।

शिलाप्रवंगस्तु वृष्यः प्रमेहगजकेशरी।
बलकृद्बस्तिशोधनः मूत्रकृच्छ्रहरः परम्।।

शिलाप्रवंग (मौक्तिकयुक्त)

उपयुक्तता:
प्रमेह, मूत्रदाह, मूत्रकृच्छ्र, शीघ्रवीर्यपतन, अष्ठीला, क्लैब्य, दौर्बल्य, ओजक्षय

प्रमेह के उपद्रव – हस्तपादतलदाह, दुर्बलता आदि

मात्रा एवं अनुपान :
१ से २ गोलियाँ दिन में २ बार दूध अथवा चिकित्सक की सलाह अनुसार

Shree Dhootapapeshwar Standards
SDS Monograph No. 0700084
Shilapravang (with Mouktik)

उपलब्धता : ४० गोली, १०० गोली

ए-फ्लू-ओ-सिल- फोर्टः ज्वरघ्नी

समाचार पत्र Independent, २ जुलाई २०१९ के वृत्त 'Antibiotics increase chances of mild flu turning deadly' के अनुसार फ्लू के आरंभ में ही एंटीबायोटिक का सेवन व्यक्ति के लिए घातक हो सकता है।

एंटीबायोटिक का दुरुपयोग, न केवल एंटीबायोटिक प्रतिरोध उत्पन्न करता हैं बल्कि हमें वायरस के प्रति अधिक संवेदनशील बनाता है। एंटीबायोटिक का दुरुपयोग अन्नपचन प्रक्रिया में उपयुक्त आंत्र जीवाणुओं को मारता है जो वायरस द्वारा फुप्फुस संक्रमण के शुरुवाती संकेतों के प्रतिक्रिया में प्रतिरक्षा प्रणाली को मदद कर संक्रमण का रोकथाम करते है। आंत्रिक जीवाणु फुप्फुसस्थित वायरस विरोधी तंत्र की सक्रियता बढाते है और प्राणवह स्रोतस् संक्रमण (फ्लू)के प्रतिक्रिया में प्रथमतः प्रतिरक्षा (प्रथम संरक्षक) कार्य करते है। इसलिए, फ्लू के उपचारार्थ एंटीबायोटीक का सेवन बिलकुल विपरीत प्रभाव डालता है, क्योंकि यह आंत्रिक जीवाणु (मायक्रोबायोटा) को विघ्न करता है, जिसका वास्तव में रक्षात्मक कार्य है।

Independent समाचार पत्र में प्रकाशित वृत्त आयुर्वेदिक दृष्टिकोन का समर्थन करता है। आयुर्वेद के अनुसार ज्वर चिकित्सा में व्याधिक्षमत्व को अनन्यसाधारण महत्त्व दिया गया है।

एक सामान्य अस्पताल में प्राणवह स्रोतस् के तीव्र संक्रमणों से पीडित २०-४० प्रतिशत रुग्ण बाह्य रुग्ण विभाग में मिलते है और १२-३५ प्रतिशत रुग्ण अंतप्रवेशित विभाग में पाए जाते है। प्राणवह स्रोतस् के ८७.५ प्रतिशत संक्रमण वायरस द्वारा श्वसन मार्ग के संक्रमण के कारण होते है। इनमें नासाशोथ, कंठशोथ, गिलायुवृद्धि, अंतकर्ण शोथ, इंन्फ्लूएंजा-श्लैष्मिक ज्वर, तीव्र श्वसानलिका शोथ, वायरल न्यूमोनिया और प्रतिश्याय के संक्रमण अंतर्भूत होते है। अधिकांश प्राणवह स्रोतस् के संक्रमण वायरस के कारण होते

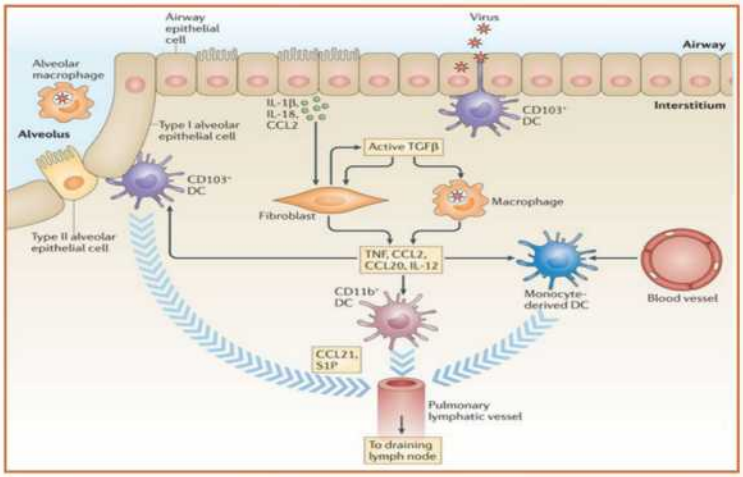

Figure 1: Regulating the adaptive immune response to respiratory virus infection

है और उनके उपचारार्थ एंटीबायोटिक की जरुरत तब तक नहीं पडती जब तक स्रावी मध्यकर्ण शोथ, गिलायु वृद्धि, सायनोसाइटिस और गंभीर फुप्फुस संक्रमण जैस उपद्रव उत्पन्न नहीं होते है।

जैसे की आकृति में दिखाया गया है, प्राणवह स्रोतस् के संक्रामक जीवाणुओं को प्राणवह स्रोतस् की अंतस्त्वचा सर्वप्रथम पहचानती है। इसके पश्चात् निर्मित विभिन्न सायटोकाईन्स और किमोकाईन्स वायरस को निष्प्रभ करते है।

सामान्यतः आधुनिक वैद्यक में प्राणवह स्रोतस् के संक्रमण की विभिन्न ज्वरघ्न, श्वासघ्न, कासघ्न औषधीयों द्वारा चिकित्सा की जाती है। इनसे केवल लाक्षणिक और अल्पकालिक उपचार होता है। साथ ही साथ इन औषधों के दुष्परिणाम भी पाए गए है।

गत दशक के अनुसंधानों में संक्रमण विकारों के चिकित्सार्थ व्याधिक्षमत्ववर्धक (इम्युनोमोडयूलेटर) औषधीयों का उपयोग किया जाने लगा है। यह एक अंत्यत प्रशस्त उपाय है क्योंकि व्याधिक्षमत्ववर्धक (इम्युनोमोडयूलेटर) औषधीयां विकार नियंत्रण के लिए सहायक उपचार के रूप में कार्य कर रही है, जब एंटिबायोटिक प्रतिरोध एक बडी समस्या बन गई है। जीवाणुओं में एंटीबायोटिक प्रतिकार के कारण एंटीबायोटिक का उपयोग प्रभावहीन हो रहा है।

आचार्य चरक के अनूसार :

बलाधिष्ठानमारोग्यं यद्थोऽर्थः क्रियाक्रमः। – च. चि. ३/१४१

विशेषतः ज्वर चिकित्सा में आरोग्य-बल, ओज, व्याधिक्षमत्व पर निर्भर है। इसलिए, ज्वर चिकित्सा का प्रमुख ध्येय बल-व्याधिक्षमत्व/प्रतिरक्षा-वर्धन ही है।

सदियों से मनुष्यों ने वायरल संक्रमणों का सामना किया है और इस मानवी विकास के दौरान संक्रमण से बचने के लिए जैविकतंत्र (शरीर) में निश्चित रक्षातंत्र (व्याधिक्षमत्व प्रणाली) विकसित हुई है। इसी काल के दौरान मनुष्य ने ज्वर चिकित्सा के लिए वनौषधि का भी उपयोग किया है। वनौषधियों में अनेक घटक द्रव्य रहते है, जिनमें औषधिकार्मुकत्व होता है। विविध वनस्पति औषधों में उपलब्ध होनेवाले घटकद्रव्य जैविक विकास (Biological evolution) में विकसित शरीररक्षातंत्र को प्रभावित कर जीवाणुविरोधी कार्य करते हैं।

आयुर्वेद ग्रंथो में ज्वर की साध्यासाध्यत्व का वर्णन इस प्रकार किया गया है -जिस रोगी के शरीर में बल(व्याधिक्षमत्व) अच्छा हो, दोष अल्प प्रकुपित हो और उपद्रव न हो तो ज्वर सुखसाध्य होता है।

ए-फ्लू-ओ-सिल फोर्ट निम्नोक्त घटकद्रव्य युक्त ज्वर चिकित्सार्थ तर्कसंगत कल्प हैः

घटक द्रव्य	मात्रा	कार्य
त्रिभुवनकिर्ति रस	१६० मि.ग्रा.	सर्वज्वरविनाशनी।
सूतशेखर रस	८० मि.ग्रा.	पितादृते ज्वरो नास्ति।
महासुदर्शन घन	४६० मि.ग्रा.	ज्वरांश्च निखिलान् हन्यान्नात्र कार्या विचारणा।

यह घटकद्रव्य शोथघ्न, ज्वरघ्न (एंटिवायरल और एंटिमायक्रोबियल) कार्य करते हैं, इसलिए, ज्वर के उपचार में उपयुक्त है।

त्रिभुवनकिर्ति रस स्थित खनिज द्रव्य जैसे शुद्ध हिंगुल और शुद्ध टंकण प्राकृत ज्वरनाशक (एंटिवायरल और एंटिमायक्रोबियल) द्रव्य हैं, जब की त्रिकटु, पिप्पलीमूल जैसे वनस्पती द्रव्य व्याधिक्षमत्ववर्धक (इम्युनोमॉडयूलेटर) और ज्वरनाशक है। शुद्ध वत्सनाभ आमदोष नाशक है। इन सभी घटकद्रव्यों को रसायन (एंटिऑक्सीडेंट) और व्याधिक्षमत्ववर्धक आर्द्रक, तुलसी और धत्तुर स्वरस की भावना दी गई है।

सुतशेखर रस में उपरोक्त वर्णित वत्सनाभ, टंकण, त्रिकटु, धत्तुर, आदि घटकद्रव्य है जो त्रिभुवनकिर्ति रस के ज्वरघ्न कार्य में सहायता करते है।

ए-फ्लू-ओ-सिल फोर्ट फ्लू और अन्य प्रकार के ज्वरों में अत्यंत उपयुक्त है क्योंकि यह बल अथवा व्याधिक्षमत्व की वृद्धिकर, शोथहर-जिवाणु विरोधी कार्य कर प्रकृपित दोषोंका शमन करती है।

ए-फ्लू-ओ-सिल फोर्ट

उपयुक्तता:

सर्व प्रकार के ज्वर और संबंधित विकार

Viral फ्लू (श्वसन नलिका के संक्रमण), कास (Acute Bronchitis), प्रतिश्याय, अंगमर्द, शिरःशूल, आगंतुज ज्वर

मात्रा एवं अनुपान :

१ से २ गोलियाँ दिन में २ से ३ बार अमृतारिष्ट, कनकासव, द्राक्षासव, कोष्ण जल के साथ या रुग्णावस्थानुसार

Shree Dhootapapeshwar Standards
SDS Monograph No. 0702544
A-Flu-O-Cil Forte

उपलब्धता :
१० गोली (ब्लिस्टर पॅक)

धूतपापेश्वर
१८७२ से आयुर्वेद सेवा

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें :
स्वास्थ्य सेवा विभाग
श्री धूतपापेश्वर लिमिटेड
१३५, नानुभाई देसाई रोड, खेतवाडी, मुंबई- ४०० ००४.
फोन : ९१-२२-६२३४ ६३०० फॅक्स :९१-२२-२३८८ १३०८
ई-मेल : healthcare@sdlindia.com
वेब साईट : www.sdlindia.com

केवल पंजीकृत चिकित्सक, अस्पताल या प्रयोगशालाओं के लिये
© All Copy Rights Reserved